IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

चार्वाक दर्शन में आनन्द की अवधारणा का समीक्षात्मक अध्ययन : आनन्द के लिए शिक्षा के विशेष संदर्भ में

डॉ0 श्रुति आनन्द[1] शीलू गुप्ता[2] असिस्टेन्ट प्रोफेसर शोध–छात्रा

आर्य कन्या डिग्री कालेज आर्य कन्या डिग्री कालेज इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद विश्वविद्यालय,

प्रयागराज

भारतीय भौतिकवादी दर्शन में चार्वाक दर्शन एक नास्तिक दर्शन है।[1,2] यह दर्शन वेद को नहीं मानता है क्योंकि चार्वाक दर्शन सिर्फ प्रत्यक्ष प्रमाण को ही सत्य मानता है। चार्वाक दर्शन वास्तविक संसार को ही स्वीकार करता है यह पारलौकिक सत्ता को महत्त्व नहीं देता है।[3]

भारतीय दर्शन में नास्तिक सम्प्रदाय के प्रतिष्ठाता आचार्य बृहस्पति हुए।

भारतीय दर्शन में चार्वाक दर्शन अपनी नवीनता एवं विचित्रता के कारण अलग एवं महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। चार्वाक किसी व्यक्ति विशेष का नाम व होकर उस सारे सम्प्रदाय के लिए प्रयुक्त हुआ है जो पुनर्जन्म और देवतावाद के विरोधी थे। चार्वाक दर्शन का एक ही लक्ष्य रहा है कि प्रत्येक व्यक्ति को स्वयमेव सत्य की खोज करनी चाहिए और स्वयं अपना मार्ग बनाना चाहिए। इसके अतिरिक्त चार्वाक दर्शन का यह भी मानना है कि चार्वाक (चारू+वाक्) उन लोगों के लिए कहा गया है जिनकी भाषा सबसे मधुर लगती थी। इसलिए इसे लोकायत दर्शन भी कहा गया है।[4]

भारतीय दर्शन में लोकायत दर्शन एक ऐसा दर्शन है जो यह मानता है कि सभी जीवों की बुद्धि एक सी नहीं होती है इसलिए प्रत्येक जीव अपनी बुद्धि के अनुसार आत्मा या परम लक्ष्य की खोज करता है चूँकि बुद्धि का विकास व्यक्ति के रूचि के आधार पर देखा जाता है इसलिए व्यक्ति को मिलने वाला आनन्द भी उसकी बुद्धि के विकास तथा रूचि पर आधारित होता है। सामान्य रूप से यह कहा जाता है कि सर्वांगीण विकास व्यक्ति को उसके आनन्द की प्राप्ति से जोड़ना है क्योंकि आनन्द रूचि से जुड़ा है। चार्वाक दर्शन का यह मानना है कि जीवन के विकास में निम्नतर स्तर पर बुद्धि स्थूल होती है इसलिए स्थूल ज्ञान ही अर्थात् वस्तु का स्थूल ज्ञान ही हमें प्राप्त होता है। लोकायत दर्शन व्यक्ति के सुख की बात करता है और यह सुख ही ऐषणा है। व्यक्ति संसार में आने पर जो प्रथम अनुभव करता है उसका दिग्दर्शन कराना ही चार्वाक दर्शन है अर्थात्

''स्थूलतम् वस्तुओं का ज्ञान कराना ही चार्वाक दर्शन है। चार्वाक का अर्थ है पूर्णपात और परोक्ष को न मानने वाला।[5] पाणिनी के एक सूत्र में आस्तिक और नास्तिक की अवधारणा दी गयी है उनके अनुसार परलोक को मानने वाला आस्तिक और न मानने वाला नास्तिक होता है। चार्वाक दर्शन पूर्णतया नास्तिक दर्शन है इसलिए यह सिर्फ प्रत्यक्ष पर बल देता है परोक्ष पर नहीं।[6]

याज्ञवल्क्य अपनी पत्नी मैत्रयी को पंचभतू ों के मिलने के द्वारा प्राप्त ज्ञान की चर्चा करते है और कहते है कि इन पंचभूतों से ज्ञान उत्पन्न होता है आरै नष्ट हो जाता है मरने के पश्चात् यह ज्ञान समाप्त हो जाता है। श्वेताश्वर उपनिषद् में सृष्टि की उत्पत्ति से सम्बन्धित अनेक मत दिये है जैसे कालवाद, स्वभाववाद, नियतिवाद तथा यदक्षावाद[7] आदि। चार्वाक दर्शन सदैव वर्तमान की बात करता है उसका मानना है कि स्थूल दृष्टि से जो पदार्थ हमारे सामने आते है उन्हें प्रमेय माना जाना चाहिए तथा जो पदार्थ जिसके दृष्टि में आता है उसे ही सत्य मानेगा। इसने पृथ्वी, जल, वायु, तेज इन चार पदार्थों को प्रमेय माना है। चार्वाक दर्शन के अनुसार केवल ये चार पदार्थ ही जड़वाद के निर्णायक तत्त्व है। इसी को मूल सामग्री कहा गया है।[8] चार्वाक दर्शन का यदि तात्विक चिन्तन किया जाए तो यह माना जाता है कि वे आनन्द और सुख को ही सर्वोपरि मानते है। चार्वाक दर्शन कहता है कि प्रमेयों का ज्ञान प्रमाण के द्वारा होता है और प्रमाण की संख्या प्रमेयों की संख्या पर निर्भर होती है इसलिए जितनी प्रमाणों से प्रमेयों का ज्ञान हो उतनी ही संख्या को प्रमाणों को स्वीकार करना चाहिए। जिनका ज्ञान एक मात्र प्रत्यक्ष प्रमाण होता है। जो प्रत्यक्ष नहीं वे सम्भावना मात्र है ऐसा चार्वाक स्वीकार करते है। प्रत्यक्ष के भेद को स्पष्ट करते हुए चक्षु, नाक, कान, त्वचा तथा जिह्वा को प्रत्यक्ष प्रमाण के रूप में स्वीकार करते है इस प्रकार पाँच प्रमाणों को चार्वाक स्वीकार करते है। सामान्य रूप से जब हम शिक्षा की बात करते है तो शिक्षा को व्यक्ति के परम आनन्द से जोड़ते है यदि आध्यात्मिक आनन्द को छोड़ दें तो समस्त आनन्द इन्हीं पंच प्रमाणों के माध्यम से प्राप्त होता है क्योंकि ये पाँचों इन्द्रियाँ हमें शिक्षा के नजदीक ही नहीं ले जाती वरन् हमें प्रत्यक्ष प्रमाण के रूप में उस सुख की अनुभूति कराती है जिन्हें एक मूढ़ अवस्था का व्यक्ति भी सरलता से स्वीकार कर लेता है। इस प्रकार यह कह सकते हैं कि किसी विद्यार्थी के अन्दर अनेक अलग–अलग गुणों को अध्यापक नहीं देख पाता परन्तु जब उसके अन्तर्निहित शक्तियों को वह सही दिशा देता है जिससे उस चैतन्य का प्रादुर्भाव हो जाता है जिससे वह सही प्रकार से अधिगम करने में सक्षम हो जाता है और उस शैक्षिक प्रक्रिया में भी आनन्द की अनुभूति होने लगती है।

व्यक्ति सामान्य रूप से धर्म, कर्म, पाप–पुण्य के बेड़ी में जकड़ा रहता है। प्रकृतिवादी भी कहते हैं कि अध्यापक जब शिशु को शिक्षा देता है तो वह उसके प्राकृतिक गुणों को नष्ट करता है तथा मनुष्य निर्मित गुणों को उसके ऊपर अध्यारोपित करता है। इससे शिशु या विद्यार्थी की प्राकृतिक बनावट पर असर होता है। वह छोटा विद्यार्थी पाप–पुण्य की परिभाषा को नहीं जानता लेकिन उसे यह बलात् समझाया जाता है। सामान्य रूप से स्थूल बुद्धि के अनुसार जगत् का जो प्रत्यक्षरूप प्राप्त होता है उसे ही चार्वाक प्रतिपादित करते हैं और उनका मानना है कि

किसी शिशु का ईश्वर या परलोक से कोई मतलब नहीं लेकिन उसे यदि अच्छे खिलौने, अच्छा भोजन प्राप्त हो तो उसे स्वर्ग के सुख का अनुभव होता है। इस तरह चार्वाक दर्शन में शारीरिक व मानसिक दु:ख को नरक माना तथा ऐन्द्रिक सुख को स्वर्ग से तुलना की आरे इसलिए उन्होंने इसे जीवन का लक्ष्य माना। चार्वाक दर्शन सुखवादी प्रकृति का है।[9] चार्वाक दर्शन के अनुसार जीवन में दु:ख का होना तो निश्चित है परन्तु जीवन का लक्ष्य सुखोपभोग ही बताया है। चार्वाक दर्शन के अनुसार दु:ख के आ जाने पर सुख को पीछे नहीं करना चाहिए। चार्वाक के अनुसार परलोक के सुख की सोच में इस लोक के सुख को ग्रहण न करना मूर्खता है। चार्वाक दर्शन जिस धर्म में दु:ख अधिक और सुख कम प्राप्त होता है उसे वह नहीं मानता है।[10] चार्वाक दर्शन सुख को परम लक्ष्य मानता है उनके अनुसार यावज्जीवेत्सुखं जीवेतृणं कृत्वा घृतं पिवेत्, भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कृतः।।

अर्थात् जब तक जीवन है तब तक उसको पूरी स्वतन्त्रता व सुख के साथ जीओ।[11] क्योंकि उनका मानना था कि सत्य बोलना, धार्मिक ग्रन्थ पढ़ना ये सब कर्मलोभ के कारण लोग करते है उनका मानना है कि जीवन सुख के लिए है तो जो कर्म वह सार्थक हो इसलिए उन्होंने कृषि, कर्म, व्यापार राजनीतिक ये सब करणीय कर्म है इन्हें करना चाहिए ऐसा कहा है।[12]

यदि आज के परिप्रेक्ष्य में इस दर्शन के माध्यम से हम आत्मा की बात करे तो यह सर्वथा सही जान पड़ता है कि आत्मा को परतन्त्र नहीं होना चाहिए यदिवह परतन्त्र रहेगा तो व्यक्ति आनन्द के अनुभूति से अपने को अलग पायेगा। इसलिए आनन्द के लिए प्रदान की जाने वाली शिक्षा यह बताती है कि आत्मा परतन्त्र न हो व्यक्ति का विवेक जागरूक हो वह अपने मनोनुकूल कार्य करे तथा शिक्षा को वह भार से न ग्रहण करें वरन् वह उसको प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण करें। प्रत्यक्ष चैतन्य रूप में ग्रहण करें जिससे वह ज्ञान को सही प्रकार से प्राप्त करेगा और शिक्षा की जो चरम् कल्पना आनन्द प्रदान करने की है उसे वह प्राप्त कर सकेगा। सर्वदर्शन संग्रह में चार्वाक के मत से सुख की इस जीवन का प्रधान लक्ष्य है सुखवाद।[13] सुखवाद पाश्चात्य दर्शन का एक भाग है जो चार्वाक दर्शन की भांति सुख और आनन्द में विश्वास करता है। यह भौतिकवादी दर्शन के नास्तिक सम्प्रदाय में विश्वास करता है। सुखवाद नीतिशास्त्र के अन्तर्गत नैतिक अपेक्षाओं की अभिवृत्ति करने वाला सिद्धान्त है। आनन्द मनुष्य का मुख्य निर्णायक गुण है, जो उसके स्वभाव में निहित होता है। सुखवाद एपीक्यरू स की शिक्षा में अपने शीर्ष स्थान पर है। सुखवाद के विचारों को मिल तथा बेंथम के उपयोगितावाद में केन्द्रीय स्थान प्राप्त है।[14] आज शिक्षा कहीं न कहीं व्यक्ति को समाज से एवं समाज को व्यक्ति से दूर करते हुए दिखाई देती है क्योंकि शिक्षा का ताना–बाना उस अन्तिम अनुभव तक नहीं पहुँच पा रहा है जहाँ शिक्षा की कल्पना की गयी थी। जब चार्वाक दर्शन ''देहात्मवाद'' कहता है तो इसका अर्थ है कि मैं जो हूँ उसको वह स्वीकार करता है और इस प्रकार देह ही आत्मा है यह कहकर व्यक्ति के अन्दर तक आत्म सम्मान एवं आत्म बल प्रदान करता

है। जब भी हम आनन्द की चर्चा करते है तो यह आनन्द चार्वाक दर्शन में ऐन्द्रिक सुख से जुड़ता है। आनन्द की शिक्षा में निहित क्रियाएं छात्रों के ऐन्द्रिक ज्ञान के साथ–साथ उन्हें मानसिक सुख की भी अनुभूति कराने में सहायक है। शिक्षा का यह मानना है कि इन्द्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान दीर्घावधि तक रहता है और यदि विद्यार्थी को यह ज्ञान रूचिकर लगता है तो उसे सुख की अनुभूति होती है। जो शिक्षा के साथ सुख और स्वावलम्बन न दे सके उस शिक्षा को चार्वाक दर्शन स्वीकार नहीं करता क्योंकि वह व्यक्ति के अन्दर सुख की अनुभूति को सर्वोपरि मानता है। यह सुख बच्चे को कहानी से मिलता है, क्रियाएं करने से मिलता है यह सामाजिक समरसता से मिलता है व सामाजिक संस्थाओं, सामाजिक सम्बन्ध में मिलता है तो वह शिक्षा अपने आप में सर्वोच्च है आज के वर्तमान युग में शिक्षा सुख और धन के लिए लेकिन जब हम आनन्द के लिए शिक्षा पाठ्यक्रम की चर्चा करते है तो हम छात्र के उस आनन्द की संकल्पना की बात करते है जिसमें वह परस्पर लेन–देन (Sharing and Caring) सीखता है और अपने जीवन की कुछ कमियों को दूर करने का प्रयास करता है। इस प्रकार वह सुख की अनुभूति करता है।

इस प्रकार हम कह सकते है कि भारतीय दर्शन में निहित लोकायत दर्शन आनन्दके लिए शिक्षा पाठ्यक्रम में वर्तमान परिदृश्य से अत्यन्त प्रासंगिक है क्योंकि यह वह दर्शन है जो छात्रों को उसके स्वावलम्बन के साथ उसके लौकिक सुख का भी ध्यान रखता है। छोटे बच्चों में सुख का सम्प्रत्यय उनकी अपनी छोटी–छोटी खुशियाँ है जिन्हें वे परस्पर एक साथ मिलकर प्राप्त करते ही नहीं है वरन् उनकी शिक्षा भी इस प्रकार है बल्कि यह कहे कि आनन्द के लिए शिक्षा में चार्वाक दर्शन विद्यार्थी के मूलभतू सुख के रूप में दिखाई देता है। जिसे चार्वाक अन्तिम सत्य कहते है आरै यह अन्तिम सत्य ही परम सुख आनन्द प्रदान करते है। वास्तविक जीवन की शिक्षा जो आनन्द से जुड़ी है उसका प्रतिरूप चार्वाक दर्शन में दिखता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 hi. m.wikipedia.org/wiki.

2 नास्तिको वेदनिन्दक : मनुस्मृति, 2/11.

3 प्दकपंद त्‍जपवदंसपेउए बिंतआं जव छंतमदकतं कंझ्ीवसांतण

4 भारतीय दर्शन, वाचस्पति गैरोला, पृ0 68.

5 बृहदारण्यक उपनिषद् (2.4.12).

6 अस्ति, नास्ति दिष्टं मतिः। अष्टाध्यायी, 4/4/60.

7 श्वेताश्वर उपनिषद्, पृ0 119. 8 भारतीय दर्शन, वाचस्पति गैरोला, पृ0 64. 9 भारतीय दर्शन, वाचस्पति गैरोला, पृ0 71.

10 भारतीय दर्शन, वाचस्पति गैरोला, पृ0 72. 11 भारतीय दर्शन, डॉ0 नन्दकिशोर देवराज, पृ0 145. 12 सर्वसिद्धान्त संग्रह लोकायत मत कारिका (8/16/18).

13 hi.m.wikipedia.org.

14 दर्शन कोष, प्रगति प्रकाशन, मास्को पृ0 725.